The Asian Thinker
A Quarterly Bilingual Peer-Reviewed Journal for Social Sciences and Humanities
Year-8 Volume: II, April-June, 2026 Issue-30 ISSN: 2582-1296 (Online)
Website: www.theasianthinker.com **Email**: asianthinkerjournal@gmail.com

43. कथा-गद्य का जादुई शिल्प : विनोद कुमार शुक्ल के कथा-साहित्य का विश्लेषणात्मक अध्ययन

डॉ. अमित पाण्डेय
सीनियर फैकल्टी
पार्थ एजुकेशन, प्रयागराज।

सारांश

विनोद कुमार शुक्ल समकालीन हिन्दी साहित्य के ऐसे रचनाकार हैं जिन्होंने कविता और कथा के मध्य स्थित पारम्परिक सीमाओं को अपनी विशिष्ट रचनात्मक दृष्टि से चुनौती दी है। उनका कथा-साहित्य केवल कथ्य की नवीनता के कारण ही महत्त्वपूर्ण नहीं है, बल्कि अपने अद्वितीय शिल्प, लयात्मक गद्य, मौन की अर्थवत्ता तथा भाषा के अभिनव प्रयोग के कारण भी विशिष्ट स्थान रखता है। प्रस्तुत शोध-पत्र में विनोद कुमार शुक्ल के कथा-साहित्य के गद्य-शिल्प का विश्लेषण किया गया है। विशेष रूप से उनके उपन्यासों एवं कहानियों में उपस्थित लयात्मकता, विधाओं के अतिक्रमण, मौन की अभिव्यक्ति तथा मर्म-प्रभाव की रचनात्मक युक्तियों का अध्ययन करने का प्रयास गया है। प्रस्तुत शोध-पत्र में यह स्पष्ट करने का प्रयास किया गया है कि शुक्ल जी का गद्य पारम्परिक कथा-भाषा का अनुसरण नहीं करता, बल्कि कविता की संवेदना और कथा की संरचना का ऐसा समन्वय प्रस्तुत करता है जो हिन्दी कथा-साहित्य को नवीन अभिव्यक्ति प्रदान करता है। उनकी रचनाओं में भाषा केवल संप्रेषण का माध्यम न होकर स्वयं एक सृजनात्मक अनुभव बन जाती है। यही कारण है कि उनका कथा-साहित्य हिन्दी गद्य की विकास-यात्रा में एक महत्त्वपूर्ण उपलब्धि के रूप में प्रतिष्ठित होता है।

मुख्य शब्द : विनोद कुमार शुक्ल, कथा-साहित्य, गद्य-शिल्प, लयात्मकता, मौन, मर्म-प्रभाव, कथा-भाषा, समकालीन हिन्दी साहित्य।

प्रस्तावना

समकालीन हिन्दी कथा-साहित्य में विनोद कुमार शुक्ल का नाम उन विरल रचनाकारों में लिया जाता है जिन्होंने भाषा, शिल्प और अभिव्यक्ति के स्तर पर मौलिक प्रयोग करते हुए कथा-विधा की परम्परागत संरचना का पुनर्निर्माण किया है। वे मूलतः कवि हैं, किन्तु उनकी रचनात्मक प्रतिभा का विस्तार कविता तक सीमित नहीं है। उपन्यास और कहानी के क्षेत्र में भी उन्होंने ऐसी विशिष्ट शैली विकसित की है जिसमें कविता की लय, संवेदना और सांकेतिकता कथा के साथ सहज रूप से समन्वित हो जाती है। फलतः उनका कथा-साहित्य हिन्दी गद्य की प्रचलित परम्पराओं से भिन्न एक नवीन सौन्दर्यबोध का निर्माण करता है।

The Asian Thinker
A Quarterly Bilingual Peer-Reviewed Journal for Social Sciences and Humanities
Year-8 Volume: II, April-June, 2026 Issue-30 ISSN: 2582-1296 (Online)
Website: www.theasianthinker.com **Email**: asianthinkerjournal@gmail.com

विनोद कुमार शुक्ल के कथा-साहित्य की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि उसमें कथानक की अपेक्षा भाषा और संवेदना अधिक महत्त्वपूर्ण हो जाती है। उनकी रचनाओं में साधारण जीवन की घटनाएँ भी अपनी प्रस्तुति के कारण असाधारण बन उठती हैं। वे शब्दों के माध्यम से ऐसा वातावरण निर्मित करते हैं जिसमें यथार्थ और कल्पना, दृश्य और अदृश्य, मौन और अभिव्यक्ति एक-दूसरे में घुल-मिल जाते हैं। यही कारण है कि उनका गद्य पाठक को केवल कथा नहीं सुनाता, बल्कि उसे एक विशिष्ट अनुभव से भी गुजरने के लिए बाध्य करता है।

विनोद कुमार शुक्ल ने अब तक छह उपन्यासों की रचना की है, जिनमें *नौकर की कमीज*, *खिलेगा तो देखेंगे* तथा *दीवार में एक खिड़की रहती थी* विशेष रूप से चर्चित हैं। इसके अतिरिक्त उनका कहानी-साहित्य भी अपनी विशिष्ट भाषा और शिल्प के कारण समकालीन हिन्दी कथा-साहित्य में अलग पहचान रखता है। उनकी कहानियों में कथात्मकता की अपेक्षा संवेदना, लय और बिंबात्मकता का महत्त्व अधिक दिखाई देता है। यही कारण है कि अनेक आलोचकों ने उनके कथा-साहित्य को कविता और गद्य के मध्य स्थित एक नवीन रचनात्मक प्रयोग माना है।

प्रस्तुत शोध-पत्र में विनोद कुमार शुक्ल के कथा-साहित्य के गद्य-शिल्प का अध्ययन करते हुए उसके प्रमुख कलात्मक आयामों का विश्लेषण किया गया है। विशेषतः लयात्मकता, विधाओं का अतिक्रमण, मौन की अभिव्यक्ति तथा मर्म-प्रभाव जैसी शिल्पगत विशेषताओं के आधार पर उनके कथा-साहित्य की रचनात्मक उपलब्धियों को समझने का प्रयास किया गया है।

कथा-गद्य की लयात्मक संरचना

विनोद कुमार शुक्ल जी कविता के क्षेत्र से कथा के क्षेत्र में आये। उनके कविता लेखन की कहानी भी बड़ी दिलचस्प है। मुक्तिबोध जी ने उनकी कुछ कविताएँ पढ़ीं और चौंक गए। उन्होंने स्वयं श्रीकांत वर्मा से अनुरोध किया था कि वे 'कृति' में उनकी कविताएँ प्रकाशित करें। बस फिर क्या था? एक बार जब शुक्ल जी ने लिखना आरम्भ किया तो फिर लिखते ही गए। उनका स्थान कविता के क्षेत्र में जितना ऊँचा है, उससे कम कथाओं के क्षेत्र में नहीं है। उन्होंने कुल छ: उपन्यासों की रचना की। इनमें से तीन बच्चों के लिए लिखे गए हैं और बाकी के तीन सबके लिए। उनकी कीर्ति का आधार उनके वे तीन उपन्यास हैं जो बच्चों के लिए नहीं लिखे गए। वे तीनों उपन्यास हैं – 'नौकर की कमीज', 'खिलेगा तो देखेंगे' और 'दीवार में एक खिड़की रहती थी।' अब तक शुक्ल जी का एक कहानी संग्रह प्रकाशित हुआ है – 'महाविद्यालय।' इस संग्रह के अतिरिक्त भी उन्होंने कुछ कहानियाँ लिखी हैं जो 'कथादेश' के कुछ अंकों में प्रकाशित हुई हैं। कुछ कहानियाँ उन्होंने बच्चों के लिए भी लिखी हैं। उनका कथा साहित्य बहुत विशाल तो नहीं है लेकिन शिल्प की दृष्टि से उनका प्रभाव लम्बे अरसे तक याद रखा जाएगा।

The Asian Thinker
A Quarterly Bilingual Peer-Reviewed Journal for Social Sciences and Humanities
Year-8 Volume: II, April-June, 2026 Issue-30 ISSN: 2582-1296 (Online)
Website: www.theasianthinker.com **Email**: asianthinkerjournal@gmail.com

जो तत्त्व कविता को गद्य से अलग करता है उसका नाम है – 'लय।' लय के कारण ही कविता की बड़ी-बड़ी पंक्तियाँ सहज ही याद हो जाती हैं जबकि गद्य की पंक्तियाँ रटाये नहीं रटी जातीं। शुक्ल जी के कथा साहित्य के गद्य की पहली विशेषता है लयात्मकता। चाहे कहानी हो या उपन्यास उनके गद्य में लय सर्वत्र विद्यमान है। उनका गद्य कहीं-कहीं इतना अधिक लयात्मक हो जाता है कि पता ही नहीं चलता है कि कविता लिखी गई है या कोई कहानी-उपन्यास। 'दीवार में एक खिड़की रहती थी' उपन्यास की भाषा का एक नमूना देखिये – "कैलेंडर जो हवा में फड़फड़ा रहा था इससे अगले महीने की तारीख दिख जाती थी। आने वाले दिन दिख जाते थे। वर्तमान का सुख इतना था कि भविष्य आगे उपेक्षित-सा रस्ते में पड़ा रहता, जब तक पहुँचो तो लगता खुद बेचारा रस्ते से हटकर और आगे चला गया।"[1] अब सामान्य रूप से इसे पढ़ने पर तो यही लगेगा कि उपर्युक्त पंक्तियाँ गद्य की ही पंक्तियाँ हैं न कि किसी कविता की। लेकिन यदि उचित स्थान पर बिना किसी शब्द का क्रम परिवर्तित किये इन पंक्तियों को नीचे की तरफ धकेल दिया जाए तो पूरी लयात्मकता स्पष्ट हो जाती है –

"कैलेंडर जो हवा में फड़फड़ा रहा था

इससे अगले महीने की तारीख दिख जाती थी।

आने वाले दिन दिख जाते थे।

वर्तमान का सुख इतना था कि

भविष्य आगे उपेक्षित-सा रस्ते में पड़ा रहता,

जब तक पहुँचो तो लगता खुद बेचारा रस्ते से हटकर

और आगे चला गया।"

अब इन पंक्तियों को पढ़कर इसका बिलकुल भी अंदाजा नहीं लगाया जा सकता है कि ये गद्य हैं या पद्य? ठीक ऐसा ही शुक्ल जी की कहानियों में भी हुआ है। बल्कि कहानियों में तो वे और भी आगे बढ़े हुए मालूम होते हैं। उपन्यासों के गद्य में तो फिर भी पंक्तियों को उचित स्थान पर नीचे की तरफ धकेलने की आवश्यकता पड़ी। शुक्ल जी की कहानियों में तो यह आवश्यकता भी नहीं रह जाती। शुक्ल जी की कहानी 'पेड़ का जादू' की पंक्तियाँ देखिए। उन्हें पढ़कर लगेगा ही नहीं कि कोई कहानी लिखी गई है –

The Asian Thinker

The Asian Thinker
A Quarterly Bilingual Peer-Reviewed Journal for Social Sciences and Humanities
Year-8 Volume: II, April-June, 2026 Issue-30 ISSN: 2582-1296 (Online)
Website: www.theasianthinker.com **Email**: asianthinkerjournal@gmail.com

"बुआ के घर में पेड़ था।
पेड़ पर गिलहरी देखकर मैंने कहा,
"बुआ ! आपने गिलहरी कहाँ से खरीदी?
मैं भी लूँगा। उसे पालूँगा।"
बुआ ने कहा,
मेरे घर में पेड़ है। पेड़ के होने से गिलहरी अपने आप आ जाती है।"[2]

अब ये पंक्तियाँ तो ऐसी हैं कि इनमें एक अल्पविराम को भी परिवर्तित करने की आवश्यकता नहीं जान पड़ती। सब कुछ शुक्ल जी ने स्वयं ही कर रखा है। इन पंक्तियों की लयात्मकता इतनी स्पष्ट है कि कोई व्यक्ति इन्हें पहली बार पढ़कर कविता ही कहेगा। कविता के प्रति शुक्ल जी का आग्रह इतना प्रबल है कि उनके हर एक उपन्यास के प्रत्येक खंड का आरम्भ किसी न किसी सूत्रवाक्य या कविता से होता है। कई बार तो ये सूत्रवाक्य या कविताएँ उपन्यास में के उक्त खंड में लिखी गई सामग्री से बिलकुल भी मेल नहीं खाती। वे बेमेल सी लगती हैं, फिर भी शुक्ल जी के प्रत्येक उपन्यास में नजर आती हैं। जैसे-जैसे उनके उपन्यासों का क्रम बढ़ा है वैसे-वैसे ही उनके उपन्यासों में लयात्मकता और कविता की मात्रा भी बढ़ती गई है। 'नौकर की कमीज' में जो सूत्रवाक्य छोटे और संक्षिप्त थे वही 'यासि रासा त' तक पहुँचते-पहुँचते पूर्ण कविता का रूप धारण कर लेते हैं। उपन्यासों और कहानियों की भाषा में कविता का ऐसा घुल-मिल जाना कि उन्हें अलगाना ही संभव न रह जाए, शुक्ल जी के शिल्प की अपनी अलग ही विशेषता है। केदारनाथ सिंह जी ने शुक्ल जी के बारे में लिखा है – "वे भाषा को तोड़कर संवेदना के धरातल पर पुनः एक नए संयोजन में रचते हैं। वे उसे नया करते हैं। हिंदी में विनोद कुमार शुक्ल से पहले काव्य-भाषा के साथ यह व्यवहार केवल निराला और शमशेर ने ही बरता है। भाषा के साथ एक रचनात्मक छेड़छाड़ करते हुए उसे एक नया स्वरुप देना, यह चीज विनोद कुमार शुक्ल के यहाँ मिलती है।"[3] भाषा के इस जोड़-तोड़ को केदारनाथ जी ने 'शुक्लपन' की संज्ञा दी है। मजे की बात यह है कि यही 'शुक्लपन' उनके उपन्यासों में भी है, इसलिए उनके कथा साहित्य का गद्य भी अनोखा बन गया है।

विधाओं का अतिक्रमण और अल्पकथन का सौंदर्य

शुक्ल जी के कथा साहित्य के गद्य की दूसरी विशेषता है – 'विधाओं का अतिक्रमण कर जाना।' शुक्ल जी मूलतः एक कवि हैं। यही कारण है कि वे किसी भी विधा में रचना कर रहे हों पर कविताओं का मोह वे छोड़ नहीं पाते। इसलिए ही उन्होंने गद्य की विधा को तोड़कर अपने अनुकूल ऐसे ढाल लिया है कि पता ही नहीं चलता है कि रचना गद्य

The Asian Thinker
A Quarterly Bilingual Peer-Reviewed Journal for Social Sciences and Humanities
Year-8 Volume: II, April-June, 2026 Issue-30 ISSN: 2582-1296 (Online)
Website: www.theasianthinker.com **Email**: asianthinkerjournal@gmail.com

की है या पद्य की? 'गमले में जंगल', 'मैं कह रहा था', ''शहर में एक तितली दिखी' आदि कहानियाँ यह पता ही नहीं लगने देतीं कि वे सचमुच की कहानियाँ हैं या कोई कविता? कबीरदास जी के सन्दर्भ में यह बात कही जाती है कि उन्होंने भाषा को दरेरा दिया था परन्तु यहाँ तो शुक्ल जी विधाओं को ही दरेरा दे देते हैं। इसे तो केदारनाथ जी का 'शुक्लपन' कहकर भी नहीं चलाया जा सकता। वे गद्य की विधाओं को तोड़कर, उनमे पद्य का प्रवेश कराकर एक नई ही विधा की रचना कर देते हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि इस विधा को कोई नया नाम ही देना पड़ेगा।

शुक्ल जी के गद्य की एक अन्य विशेषता है – 'मौन की अभिव्यक्ति।' शुक्ल जी के कथा साहित्य में यह बारम्बार हुआ है कि वे उन स्थलों पर चुप्पी साध लेते हैं जिन्हें उक्त कहानी या उपन्यास का सर्वाधिक मार्मिक स्थल कहा जा सकता है। मौन की माँग हिंदी साहित्य परम्परा में अज्ञेय जी ने बहुत बार की। लेकिन यह अभिव्यक्ति उन्होंने कविताओं में की। न कि गद्य में। कविताओं में मार्मिकता बढ़ाने के लिए 'मौन भी अभिव्यंजना है' पद का प्रयोग किया जा सकता है। लेकिन गद्य इस तरह से नहीं चलता। गद्य में अभिव्यक्ति खुलकर की जाती है। कहानियों में न सही लेकिन उपन्यास अपने स्वरूप और आकार की दृष्टि से इसलिए ही उपन्यास कहलाता है क्योंकि उसमें अभिव्यक्ति करने हेतु पर्याप्त अवकाश रहता है। लेकिन शुक्ल जी के यहाँ चुप्पी उनके उपन्यासों में अधिक है और कविताओं में कम। कविताओं में वे सब कुछ लिख देते हैं, लेकिन उपन्यासों में मौन हो जाते हैं। 'दीवार में एक खिड़की रहती थी' उपन्यास में साधू और हाथी पूरे उपन्यास में विद्यमान हैं। उनका अचानक से हमेशा के लिए चले जाना अत्यंत मार्मिक प्रसंग है, परन्तु इसे मात्र एक-दो पंक्तियों में निपटाकर शुक्ल जी आगे बढ़ गए हैं। पूरे उपन्यास में पाठक हाथी जैसे अद्भुत जीव और साधू के विचित्र व्यवहार से सामंजस्य बिठाता चलता है, और अचानक से पता चलता है कि वे कहानी का हिस्सा ही नहीं रहे। अब ऐसे प्रसंग को चुप्पी कहा जाए या कथा प्रणाली का कोई दोष? ठीक इसी प्रकार इसी उपन्यास में सोनसी का मायके चले जाना पूरे उपन्यास का सर्वाधिक मार्मिक प्रसंग है लेकिन शुक्ल जी यहाँ भी मात्र दो पंक्तियाँ लिखकर मौन हो जाते हैं – "बस इस तरह रवाना हुई जैसे सोनसी को छीनकर ले गई। लौटते समय घर जाने के पहले वे गूलर के पेड़ की ओर चले गए। पेड़ पर लड़का नहीं था। घर के अन्दर जाने का मन नहीं हो रहा था।"[4] लेकिन इतने भर से पाठक को तृप्ति नहीं मिल पाती। शुक्ल जी की यह चुप्पी कविताओं में होती तब भी ठीक था। लेकिन उपन्यासों में यह चुप्पी अखर जाती है। चुप्पी साधने का भी एक वक्त होता है। यह वक्त कम से कम चुप्पी का नहीं था। मौन वहाँ ठीक होता है जहाँ रचनाकार चाहता है कि पाठक आगे की कल्पना स्वयं करे। और यह बात कविता में ठीक भी लगती है क्योंकि कविता में सब कुछ नहीं कहा जा सकता। लेकिन उपन्यास ऐसी विधा है जहाँ सब कुछ कहा जा सकता है। लेकिन शुक्ल जी तो ठहरे शुक्ल

The Asian Thinker
A Quarterly Bilingual Peer-Reviewed Journal for Social Sciences and Humanities
Year-8 Volume: II, April-June, 2026 Issue-30 ISSN: 2582-1296 (Online)
Website: www.theasianthinker.com **Email**: asianthinkerjournal@gmail.com

जी। उन्होंने मौन का प्रवेश कविता के बाद कथा साहित्य में भी करा दिया। यह भी उनके गद्य की अपनी अलग विशिष्टता है।

मर्म-प्रभाव और संवेदनात्मक कथा-संरचना

शुक्ल जी के कथा साहित्य में मौन की अभिव्यक्ति उपन्यासों में ही अधिक हुई है। कहानियों में इसका अभाव है। उनकी कहानियों में मौन के स्थान पर 'मर्म-प्रभाव' का प्रयोग किया गया है। 'मर्म-प्रभाव' एक ऐसी युक्ति है जिसके अंतर्गत शुक्ल जी ने अपनी कहानियों का अंत ऐसे बिंदु पर लाकर किया है कि वे पाठक के हृदय को बेध देती हैं। ऐसा उनकी अधिकतर कहानियों में हुआ है भले ही वे सबके लिए लिखी गईं हो या बच्चों के लिए। 'शहर में तक तितली दिखी' ऐसी ही एक अद्भुत कथा है। कथा के अनुसार एक दिन एक तितली शहर देखने निकली। जब वह शहर पहुँची तो भीड़-भाड़ और सबकी जल्दीबाजी देखकर चौंक गई। उसे आश्चर्य हुआ कि कोई उसको देख ही नहीं रहा था। जबकि यदि वह गाँव में निकल जाती तो गाँव के बच्चे उसके पीछे-पीछे भागने-दौड़ने लगते। कहानी के अंत में एक लड़का तितली को ध्यान से देखता है। अंत में पता चलता है कि तितली की तरह वह लड़का भी पहली बार शहर देखने आया था। सिर्फ उसके पास ही इतना समय था कि वह तितली को देख सके। शहरीकरण की प्रक्रिया और नगरीय संवेदनाओं पर इतना करारा व्यंग्य अन्यत्र देखने को नहीं मिलता। इसे पढ़कर पाठक हतप्रभ रह जाता है और विचार करने पर मजबूर हो जाता है कि क्या शहरों में सचमुच मनुष्य की चेतना इतनी थक चुकी है? आज के उत्तर आधुनिक युग में हत्या, लूट, भ्रष्टाचार की ख़बरों के लिए जनता के मन में जो स्वीकार भाव आ चुका है कि लोग इन खबरों पर अपनी दृष्टि भी नहीं डालते। उसे देखकर लगता है कि मनुष्य की चेतना की थकान झूठी नहीं है। सच में मनुष्य की चेतना थक चुकी है। शुक्ल जी का कथा साहित्य इसी चेतना की थकान का शमन करने का प्रयास करता है।

ऐसा ही मर्म प्रभाव उनकी अन्य कहानियों में है। 'गोदाम' कहानी का नायक ऐसे घरों में रहने का आदी है जिनमें कोई वृक्ष हो। वह एक नया कमरा किराए पर लेता है और जिस घर में वह कमरा है, उसमें करंज का एक पेड़ है। कुछ समय बाद किन्हीं कारणों से मकानमालिक उसे कमरा खाली करने के लिए कहता है लेकिन वह कुछ न कुछ बहाना बनाकर कमरा खाली नहीं करता। एक दिन बातों-बातों में उसके मुँह से निकल जाता है कि मुझे पेड़ों वाले घर में रहना अच्छा लगता है। बस फिर जो होता है उसकी आशा न पाठक करता है न ही कोई और। मकानमालिक करंज के वृक्ष को कटवा देता है। शुक्ल जी की निम्न पंक्तियाँ इस प्रसंग को बहुत गहरी संवेदना से भर देती हैं –

The Asian Thinker
A Quarterly Bilingual Peer-Reviewed Journal for Social Sciences and Humanities
Year-8 Volume: II, April-June, 2026 Issue-30 ISSN: 2582-1296 (Online)
Website: www.theasianthinker.com **Email**: asianthinkerjournal@gmail.com

"मकान मालिक जैसे मेरा इन्तजार कर रहा था। आते ही उसने कहा, "आपका अब यह एक पेड़ वाला घर नहीं है।"

"जी !" मैंने कहा। आपने मुझे निकालने के लिए पेड़ तक कटवा दिया।"

और किसी तरह मैंने आज का बचा हुआ दिन गुजारा। दूसरे दिन मैं एक गोदाम में रहने चला गया।"[5]

'आपने मुझे निकालने के लिए पेड़ तक कटवा दिया' पंक्तियाँ पाठक के मन को झकझोर देती हैं। वह सोचने को बाध्य हो जाता है कि उस बेचारे अदने से वृक्ष की क्या गलती थी? क्या उसका कोई महत्त्व नहीं था? क्या उसका मोल सिर्फ इतना था कि एक किरायेदार को घर से निकालने के लिए उसे कटवा दिया जाए? जो अपनी उम्र भर उस घर को छाँव प्रदान करता रहा होगा, क्यों उसके लिए मालिक के मन में जरा सा प्रेम, थोड़ी सी दया तक न जगी? ये प्रश्न पाठक के हृदय को भेद देते हैं। ऐसा शुक्ल जी कहानियों में अनेक बार हुआ है। उनकी लगभग सभी कहानियाँ ऐसे पड़ाव पर समाप्त होती हैं जहाँ से आगे की राह नहीं सूझती। पाठक भौंचक्का रह जाता है और उसका हृदय जोर-जोर से धड़कने पर मजबूर हो हाता है। यही है शुक्ल जी का 'मर्म-प्रभाव।' इस युक्ति का प्रयोग कुछ अन्य रचनाकारों की कहानियों में भी मिल सकता है लेकिन 'मर्म-प्रभाव' का ऐसा सधा हुआ प्रयोग शुक्ल जी की अपनी विशिष्टता है।

निष्कर्ष

विनोद कुमार शुक्ल जी का शिल्प अनोखा है। उनका शिल्प गद्य के पारम्परिक ढाँचे को तोड़ता है। ऐसा लगता है कि विधाओं और शिल्प से उनका सम्बन्ध सिर्फ उतना ही है जहाँ तक कि वे उनके विचारों को अभिव्यक्ति दे सकें। जब विधाएँ उनके विचारों को अभिव्यक्ति देने में असमर्थ होने लगती हैं तब वे विधाओं को इच्छानुसार परिवर्तित कर देते हैं। ऐसा करना सबके बूते की बात नहीं। यह कोई बड़ा रचनाकार ही कर सकता है। हिंदी साहित्य में कभी ऐसा करने का साहस निराला ने उठाया था। जिसकी बहुत बड़ी कीमत उन्हें चुकानी पड़ी। उनके मुक्त छंद को आलोचकों ने रबड़ छंद या केंचुआ छंद की संज्ञा दी। उन्हें साहित्य के क्षेत्र में जैसे अछूत सा बना दिया गया। लेकिन जादू वह जो सिर चढ़कर बोले। बाद में छायावादोत्तर युग में वही मुक्त छंद पूरी हिंदी कविता की आत्मा बन गया। विधाओं के स्वरुप में परिवर्तन और उनके शिल्प से छेड़छाड़ के कारण शुक्ल जी को भी ऐसे ही उद्गार का सामना करना पड़ा है। 'गोष्ठी' कहानी में शुक्ल जी ने समीक्षकों और आलोचकों के सामने यही प्रश्न रखा है कि क्या रचनाकार को किसी प्रकार की स्वतंत्रता दी जाएगी? क्या अच्छी रचना वही है जो सिर्फ आलोचकों को अच्छी लगे? क्या पाठक और रचनाकार रचना प्रक्रिया का हिस्सा नहीं हैं? क्या उन्हें अधिकार नहीं है कि वे यह निर्धारित कर सकें कि उन्हें क्या और कैसे लिखना है? जो भी हो इसमें कोई दोराय नहीं है कि शुक्ल जी एक बड़े रचनाकार हैं। और एक बड़ा रचनाकार अपनी भाषा और अपना शिल्प स्वयं

The Asian Thinker
A Quarterly Bilingual Peer-Reviewed Journal for Social Sciences and Humanities
Year-8 Volume: II, April-June, 2026 Issue-30 ISSN: 2582-1296 (Online)
Website: www.theasianthinker.com **Email**: asianthinkerjournal@gmail.com

गढ़ता है। वह विधाओं के अनुरूप स्वयं को नहीं चलाता। बल्कि विधाओं को अपने समक्ष घुटने टेकने पर विवश कर देता है। यही कार्य शुक्ल जी ने किया है। उनके गद्य को पढ़कर ऐसा लगता है कि उनके आस्वादन के लिए पाठकों को ही अपने स्वाद ग्रंथियों को परिवर्तित करना होगा। उनकी रचनाओं का आस्वादन पारम्परिक ग्रंथियों के माध्यम से नहीं किया जा सकता। इसके अतिरिक्त ऐसा लगता है कि यह शुक्ल जी का सर्वश्रेष्ठ नहीं है। जिस तरह साहित्य के क्षेत्र में वे अभी भी सक्रिय हैं, उससे यही लगता है कि उनका सर्वश्रेष्ठ आना अभी शेष है।

---

[1] शुक्ल, विनोद कुमार। *दीवार में एक खिड़की रहती थी*। वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण-2019; पृष्ठ संख्या - 149

[2] शुक्ल, विनोद कुमार। *पेड़ नहीं बैठता*। जुगनू प्रकाशन, प्रथम संस्करण, 2023; पृष्ठ संख्या - 2

[3] भारद्वाज, प्रेम (सं.)। *अनहोना शिल्प : अनहोनी कथाएँ (विनोद कुमार शुक्ल : समग्र मूल्यांकन)*। अनन्य प्रकाशन, प्रथम संस्करण, 2016; पृष्ठ संख्या -37

[4] शुक्ल, विनोद कुमार। *दीवार में एक खिड़की रहती थी*। वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण-2019; पृष्ठ संख्या - 156

[5] शुक्ल, विनोद कुमार। *गोदाम*। जुगनू प्रकाशन, प्रथम संस्करण, 2018; पृष्ठ संख्या - 8

The Asian Thinker